स्वामी शंकरानंद (डी) जरिए विधिक प्रतिनिधि

बनाम

महंत श्री सद्गुरू सरनानंद और अन्य

(सिविल अपील नं. 4175/2008)

27 मई, 2008

(एस.बी. सिन्हा और लोकेश्वर सिंह पंत, जे.जे.)

सिविल प्रक्रिया संहित 1908-सै. 92(1)एफ-न्यास सम्पत्ति के बिक्रय की मंजूरी-सम्पत्ति एक न्यास के संगठन का हिस्सा-एक महंत के शिष्य के रूप में अन्य संगठन के महंत का विरोध -उच्च न्यायालय द्वारा अपील खारिज की जाकर उसके अधिकार को नकारा-अपील में कहा गया के इसक तथ्यों के अनुसार अपीलार्थी यह साबित करने में असफल रहा कि वह पीडित व्यक्ति था- हालांकि यदि वह न्यास के कल्याण में अपना हित स्थापित करता है तो यह नहीं कहा जा सकता कि उसका अधिकार नहीं है-संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत् हस्तक्षेप करने की जरूरत नहीं-भारत का संविधान 1950-अनुच्छेद 136।

इस न्यायालय के समक्ष हरिद्वार में स्थित मठ के प्रभारी के लिए उतराधिकार के सम्बध में प्रत्यर्थी संख्या 01 मठ के प्रभारी ने प्रत्यर्थी संख्या 03 के साथ भूमि के संबंध में विक्रय का समझौता किया। आवेदन में न्यास की सम्पत्ति की बिक्री के लिए अनुमति प्राप्त करने हेतु पेष प्रार्थना पत्र जिला न्यायाधीष द्वारा उसे बेचने की अनुमति दी गई। जिसके बाद

प्रत्यर्थी संख्या 03 का नाम उत्परिवर्तित था और उचित अनुमोदन के बाद निर्माण किया गया। अपीलार्थी वाराणसी में स्थित एक मठ के प्रभारी ने जिला न्यायाधीश के आदेश के खिलाफ अपील दायर की और उच्च न्यायालय ने अपील को इस आधार पर खारिज कर दिया था कि अपील कर्ता के पास अपील को बनाए रखने का अधिकार नहीं था।

अपील खारिज करते हुए न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया:

1.1 इसलिए वर्तमान अपील खारिज करते हुए कोर्ट ने कहा कि धारा 92 सीपीसी जिला न्यायाधीश को परोपकारी और धार्मिक न्यास के संबंध में विशेष शक्तियां प्रदान करती है। और ऐसा आवेदन जिला न्यायाधीश के समक्ष ही किया जाना चाहिए और उसकी मंजूरी के अनुसार ही कार्य होना चाहिए। ऐसी प्रकृति के मामलों में न्यायपालिका माता-पिता के अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करती है। जब मंजूरी के अनुदान के विरुद्ध धारा 92(1)एफ सीपीसी के संदर्भ में आपत्ति दायर की जाती है तो उस पर गंभीरता से विचार करना चाहिए। हो सकता है कि उच्च न्यायालय यह राय देने में पूरी तरह सही नही है कि अपीलार्थी के पास अपील को बनाए रखने का अधिकार नहीं है। यह सच है कि अपीलार्थी वाराणासी में स्थित एक मठ का प्रभारी का है और उसके पास प्रश्नगत मठ के बारे में करने के लिए कुछ नहीं है। लेकिन इससे ऐसा नहीं कहा जा सकता कि कोई व्यक्ति थर्ड पार्टी होने के कारण पीडित नहीं माना जाएगा यदि वह यह साबित करता है कि वह अन्यथा न्यास के कल्याण में रुचि रखता है।

1.2 अपीलार्थी को आवेदन करने की अनुमति केवल इसलिए कि वह मठ के महन्त के उत्तराधिकार के संबंध में अपील के परिणाम में रुचि रखता है नहीं दी जा सकती जो इस न्यायालय के समक्ष विचाराधीन है। वह एक पार्टी नहीं है। वह हरिद्वार में स्थित एक प्रतिष्ठान के संबंध में अपनी इंडीविजुअल कैपेसिटी में महन्तशीप का दावा नहीं कर रहा है। इसके अलावा बेचे जाने की सम्पत्ति आबादी प्रकृति की नहीं थी बल्कि एक जंगल भूमि थी। यह भी विवादित नहीं है कि दिनांक 26.09.83 के आदेशानुसार राजस्व अभिलेखों में उत्तरदायी संख्या 01 का नाम बदल दिया गया था।

1.3 यह भारत के संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत् असाधारण अधिकार क्षेत्र के लिए उपयुक्त मामला नहीं है। तीसरे प्रत्यर्थी द्वारा दायर हल्फनामे से ऐसा प्रतीत होता है कि वह एक ट्रस्ट चला रहा है। जो एक बडी संख्या में जनता के हित की सेवा करता है। पहले से ही बडी संख्या में निर्माण हो चुके हैं। निर्माण कार्य सन् 1994 में प्रारम्भ हुआ था और सन् 1995 में पूरा हुआ। उस जगह पर विभिन्न गतिविधियां की गई हैं। उत्तरदाता संख्या 01 व 02 ने वैकल्पिक भूमि खरीदी और 10 लाख रुपये की लागत से निर्माण कार्य किए। मामले के इस दृष्टिकोण से अपील को जारी रखने का कोई उपयोगी कारण नहीं है।

मच्छिद्रनाथ केरनाथ बनाम डी.एस. माइलरप्पा और अन्य (2008) 7 एससीआर 83 संदर्भित।

सिविल अपीलेट क्षेत्राधिकार: सिविल अपील नं. 4175/2008

अंतिम निर्णय व उत्तरांचल उच्च न्यायालय के आदेश दिनांकित 19.05.2006, नैनीताल में, प्रथम अपील नं 380/2001

ए.के. गांगुली, अतिशी दीपांकर और संतोष कुमार अपीलार्थी की ओर से।

एस.आर. सिंह, अभिष्ठ कुमार, डी.एन. दुबे, अर्चना सिंह, मकरंद डी अदकर, एस.डी. सिंह, विजय कुमार, विष्वजीत सिंह प्रतिवादी के लिए।

एस.बी. सिन्हा, जे. द्वारा निर्णय पारित किया गया।

1. अनुमति स्वीकृत।

2. क्या एक महन्त से जुडा हुआ शिष्य जो धार्मिक न्यास द्वारा संचालित है को यह अधिकार होगा कि वह सीपीसी 1908 की धारा 92(1)एफ के तहत् जिला न्यायाधीश के आदेश से अपील जारी रखने का अधिकार रखेगा। यह संक्षिप्त प्रश्न इस अपील के विचार के लिए उत्पन्न होता है।

3. स्वामी स्वरूपानंद मठ के संस्थापक थे और वे स्वामी अद्वैतानंद के शिष्य थे। अद्वैतानंद महान ज्ञान वाले एक धार्मिक प्रेरणा देने वाले गुरू थे। और उनके बहुत सारे अनुयायी थे। स्वामी स्वरूपानंद ने मार्च, 1936 में मेरठ में समाधि ली और उनकी इच्छा के अनुसार स्वामी आत्म विवेकानंद महंत बने। उनके बाद स्वामी हरसेवानंद ने पदभार संभाला और उसके बाद स्वामी हरशंकरानंद ने उनका स्थान लिया। स्वामी हरशंकरानंद की मृत्यु 22.02.1993 को हुई। उनके तीन शिष्य थे सरानंद, प्रेमानंद और श्रीमति

तपेश्रा। प्रेमानंद की मृत्यु 10.06.2005 को हुई उसके बाद स्वामी शंकरानंद उनके उत्तराधिकारी बने। कहा जाता है कि अपीलार्थी स्वामी शंकरानंद का उत्तराधिकारी बना। अपीलार्थी का तर्क है कि महंत के पद का उत्तराधिकार नामांकन द्वारा होता हैं। इस प्रकार नामित व्यक्ति एक संन्यासी के जीवन को अपनाता है। वह ब्रह्मचर्य और धार्मिक भिक्षावृत्ति का जीवन जीते है।

4. स्वामी आत्म विवेकानंद की मृत्यु के बाद मंहत के कार्यालय के संबंध में एक विवाद हरसेवानंद व श्रीकृष्णसिंह के मध्य उत्पन्न हुआ। इस न्यायालय ने स्वामी आत्म विवेकानंद की मृत्यु के बाद स्वामी हरसेवानंद को उत्तराधिकारी ठहराया। हरसेवानंद की मृत्यु के बाद स्वामी हरशंकरानंद को इस कोर्ट के समक्ष लिटीगेशन के लिए प्रतिस्थापित किया गया था। इस न्यायालय के समक्ष उल्लेखित मुकदमेबाजी में उत्तराधिकारी के रूप में महंत का दर्जा प्राप्त करे या नहीं इसे खुला छोड दिया था। श्रीकृष्ण नामक एक व्यक्ति ने स्वामी हरशंकरानंद के मठ के मठाधीश होने पर सवाल उठाते हुए मुकादमा नं 153/80 दायर किया। यह मठ आमतौर पर गढवा घाट के रूप में जाना जाता है। इस न्यायालय के समक्ष पदधारक का सवाल 2003 की सिविल अपील संख्या 5550 में अभी भी लंबित है।

5. महांत सतगुरू सरानंद जो स्वामी हरशंकरानंद के एक शिष्य भी थे। वह गर्व घाट के प्रभारी थे। उन्होंने रेस्पोडेंट नं 03 के साथ पब्लिक न्यास की बिक्री के लिए एक एग्रीमेंट किया। जो राशि 3550000 पर उक्त एग्रीमेंट हुआ। उक्त राषि में से 3300000 का भुगतान अग्रिम के रूप में

किया गया। उक्त सम्पत्ति को बेचने की अनुमति देने के लिए एक आवेदन 02.07.1990 को दायर किया गया। जिसका विज्ञापन दो स्थानीय समाचारों में दिया था। कोई आपत्ति प्राप्त नहीं होने के कारण विद्वान जिला न्यायाधीश द्वारा दिनांक 13.10.1992 को अनुमति प्रदान की गई थी। 31.01.1994 को रेस्पोडेंट नं. 03 का नाम राजस्व अभिलेखों में बदल दिया गया था। प्रत्यर्थी संख्या 03 द्वारा दिनांक 15.10.1993 को हरिद्वार विकास प्राधिकरण के समक्ष भवन योजनाओं की मंजूरी के लिए आवेदन किया गया जिसकी 02.06.1994 को मंजूरी दे दी गई और प्रतिवादी संख्या 03 द्वारा विषाल निर्माण कर लिए गए। जिसे गायत्री परिवार शांति कुंज के नाम से जाना जाता है। जिसने इस भूमि पर निम्नलिखित विकसित किया-

1. ब्रह्म वर्ग शोध संस्थान

2. देव संस्कृति विश्वविद्यालय

इसमें चार हजार शक्ति पीठ, 25000 हजार प्रज्ञा संस्थान व 30000 स्वाध्याय मंडलों का नेटवर्क है। जो नियमित रूप से सत्संग, प्रवचन, प्रेरणादायक गीत और अपने क्षेत्रों में मिशन के योग्य कारण को बढावा देने के लिए विभिन्न समस्याओं पर चर्चा करते हैं। ये वास्तव में स्थानीय केन्द्रों के रूप में कार्य करते है जिसका मुख्यालय शांतिकुंज है।

6. अपीलार्थी ने 15.11.1994 को इलाहाबाद उच्च न्यायालय के समक्ष एक अपील दायर की कि जिसे उतरांचल उच्च न्यायालय स्थानांतरित कर दिया गया। एक निर्णय और दिनांक 19.05.2006 के आदेष के कारण उक्त

अपील को इस आधार पर खारिज कर दिया गया है कि अपीलार्थी व्यथित व्यक्ति नहीं था। इसलिए वह अपील को जारी नहीं रख सकता।

7. अपीलार्थी की ओर से विद्वान वरिष्ठ वकील मिस्टर ए.के. गांगुली दावा करें कि उच्च न्यायालय ने इस बारे में गम्भीर त्रुटि की है कि उसे उस एगीमेंट और जिला न्यायाधीश के बारे में जानकारी नहीं थी तथा मूल्यांकन कर्ता की रिपोर्ट के अनुसार सम्पत्ति का न्यूनतम मूल्यांकन 72 लाख होना चाहिए। न केवल 3550000 जैसा कि विद्वान जिला न्यायाधीष द्वारा पाया गया है। फिर भी ये दावा किया गया है कि इच्छुक पक्षों के बीच महंत के संबंध में विवाद इस न्यायालय के समक्ष विचाराधीन है। उच्च न्यायालय ने विवादित निर्णय पारित करने में गंभीर त्रुटि की।

8. श्री एस.आर. सिंह विद्वान वरिष्ठ वकील प्रत्यर्थी संख्या 03 के ओर से उपस्थित और दूसरी ओर विद्वान वकील श्री अदकर दूसरे प्रत्यर्थी की ओर से उपस्थित ने विवादित फैसले का समर्थन किया।

9. सिविल प्रक्रिया संहिता 1908 की धारा 92 जिला न्यायाधीश को सार्वजनिक न्यास परोपकारी और धार्मिक दोनों के संबंध में विशेष शक्ति प्रदान करती है। न्यास की सम्पत्ति की बिक्री के लिए आवेदन जिला न्यायाधीश के समक्ष ही किया जाना चाहिए और केवल उनकी मंजूरी पर ही इसे लागू किया जा सकता है। इस प्रकृति के मामले में न्याय पालिका पेरेंट्स, पेट्रिया के तहत् अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करती है। इस प्रकार सीपीसी की धारा 92(1)एफ के संदर्भ में जब अनुदान के लिए मंजूरी पर

आपत्ति दायर की जाती है। तो उस पर गंभीरता से विचार किया जाना चाहिए। उच्च न्यायालय की यह राय पूरी तरह सही नहीं है कि अपील बनाए रखने के लिए अपीलार्थी का कोई अधिकार नहीं था। यह सच है कि अपीलार्थी वाराणसी में स्थित एक मठ का प्रभारी है हालांकि यह तर्क दिया जाता है कि वह वास्तव में मिर्जापुर में रहता है। उत्तरदाताओं के अनुसार उसका विचाराधीन मठ से कोई लेना देना नहीं है। लेकिन इसका यह मतलब नही होगा कि कोई भी व्यक्ति आवेदन में थर्ड पार्टी के रूप में व्यथित व्यक्ति नहीं होगा। लेकिन उसे साबित करना होगा कि वह न्यास के कल्याण में अन्य प्रकार से हितबद्ध है।

10. उच्च न्यायालय ने अपने फैसले में कहा कि अपीलार्थी के मामले के अनुसार अपीलार्थी ने अपील न्यायालय के समक्ष दायर निषेधाज्ञा आवेदन में खुद को स्वामी हरशंकरानंद की मृत्यु पर गढवा घाट के मठ के महंत बताकर जवाबी हलफनामा दाखिल किया है। उच्च न्यायालय के समक्ष उत्तरदाताओं द्वारा अनुलग्नक 10 के रूप में काउंटर शपथ-पत्र फाइल किया है जो अतिरिक्त जिला न्यायाधीष द्वारा पारित आदेश दिनांकित 03.05.1991 है। जो दर्षाता है कि स्वामी हरशंकरानंद की मृत्यु के बाद स्वामी सरानंद प्रतिवादी नं 01 महंत बन गए हैं। इससे यह भी दर्षित होता है कि प्रेमानंद को महंत घोषित नहीं किया गया। जवाबी शपथ पत्र अनुलग्नक सीए 8 से पता चलता है कि सक्षम प्राधिकारी की उत्प्रवर्तित कार्यवाही में आदेश दिनांकित 15.06.1993 के अनुसार चादर स्वामी

हरशंकरानंद की मृत्यु पर महंती स्वामी सत्गुरू सरानंद को दी गई थी। अपीलकर्ता प्रेमानंद को नहीं। इसके अलावा उपरोक्त जवाबी हलफनामे के अनुच्छेद 4(जी) से (आर) और (ओ) से पता चलता है कि मुकदमा नं 153/1980 जिसे प्रवर्तित करने की मांग की गई थी स्वामी हरशंकरानंद की मठ गढवा घाट के महंत की स्थिति को चुनौती देने के लिए दायर की गई थी और उच्च न्यायालय ने डब्ल्यू पी संख्या 46291/2000 में पारित फैसले दिनांकित 15.05.2002 के माध्यम से मुकदमा संख्या 153/1980 की पूरी कार्यवाही को रद्द कर दिया। इसलिए वर्तमान में मुकदमा संख्या 153/1980 लंबित नहीं है। इसलिए उपरोक्त परिस्थितियों में यह बिलकुल स्पष्ट है कि अपीलार्थी प्रेमानंद मठ गढवा घाट का महंत नहीं है। इसलिए उसे पीडित पक्ष नहीं कहा जा सकता और उपरोक्त अपील को बनाए रखने का उसे कोई अधिकार नहीं है। स्वामी प्रेमानंद ने जो अपील दायर की थी जो अब मर चुकी है और अब स्वामी प्रेमानंद के उत्तराधिकार के बारे में एक विवाद है। लेकिन ऐसा माना जाता है कि स्वामी प्रेमानंद का उपरोक्त अपील को बनाए रखने का कोई अधिकार नहीं है। इसलिए स्वामी प्रेमानंद की मृत्यु के बाद इस मामले में अपीलार्थी कौन है और स्वामी प्रेमानंद के उत्तराधिकार का दावा करने वाला व्यक्ति इस विवादित आदेष से कैसे व्यथित है। इस बारे में रिकार्ड पर कुछ भी नहीं है। यह भी विवाद में नहीं है कि स्वामी प्रेमानंद विद्वान जिला न्यायाधीश के समक्ष कार्यवाही में

पक्षकार नहीं थे। हालांकि इसका यह मतलब नहीं है कि जो व्यक्ति कार्यवाही में पक्षकार नहीं था वह अपील नहीं कर सकता।

किसी व्यक्ति के अधिकार क्षेत्र के विस्तार पर हाल में मच्छिद्रनाथ केरनाथ बनाम डी.एस. माइलरप्पा और अन्य केस में विचार किया गया है। जिसको दिनांक 29.04.2008 को निपटान किया गया जिसमें यह भी निर्धारित किया गया है कि जहां एक व्यक्ति के क्षतिपूर्ति प्राप्त करने का अधिकार जुडे हुए फेसले से पराजित हो जाए तो उसे अपील करने का अधिकार प्राप्त हो सकता है। श्री सरानंद संबंधित मामले में पारित निर्णय पर उसे अपील करने का अधिकार होगा दुर्भाग्य से उच्च न्यायालय ने इस मामले पर विचार नही किया। लेकिन प्रस्तावित आदेश को देखते हुए मामले के इस पहलू से आगे निपटना आवश्यक नहीं है।

11. तीसरा प्रत्यर्थी द्वारा दाखिल शपथ पत्र से ऐसा प्रतीत होता है कि वह एक न्यास चला रहा है जो एक बडे सावर्जनिक हित की सेवा करता है। उसने बडी संख्या में निर्माण पहले से ही किया है। निर्माण कार्य सन् 1994 में शुरू हुआ और सन् 1995 में पूरा किया गया। विभिन्न गतिविधियों उस जगह पर की गई हैं। उत्तरदाता संख्या 01 और 02 ने वैकल्पिक जमीन भी खरीदी है और उस पर दस लाख रुपये की लागत से निर्माण कार्य भी किया है। इस मामले में हमारी राय में इस अपील को जारी रखने का कोई उपयोगी कारण नहीं है। इसके अलावा अपीलार्थी को केवल इस कारण से कि वह इस न्यायालय के समक्ष लंबित सिविल अपील संख्या 5550/2003

के परिणाम में रुचि रखता है अपील जारी रखने की अनुमति नहीं दी जा सकती। वह कोई पार्टी नहीं है। वह हरिद्वार में स्थित मठ के संबंध में अपनी व्यक्तिगत हैसियत में महंतशीप का दावा नहीं करता है। यह स्वीकार किया जाता है कि उसका सिविल अपील से कोई लेना-देना नहीं है। इसके अलावा बेचे जाते समय उक्त सम्पत्ति की प्रकृति आबादी नहीं थी बल्कि एक जंगल भूमि थी। यह भी विवाद में नहीं है कि सद्गुरू सरानंद का नाम भी दिनांक 26.09.1983 के आदेश के अनुसार राजस्व कार्यवाहीयों के राजस्व अभिलेखों में दर्ज किया गया है।

12. इसलिए हमारी राय में यह भारत के संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत असाधारण अधिकार क्षेत्र के प्रयोग के लिए उपयुक्त मामला नही है। तदानुसार अपील खारिज की जाती है। हर्जे खर्चे  के बारे में कोई आदेश नहीं होगा।

के के टी

अपील खारिज।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल '**सुवास**' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी श्वेता भारद्वाज (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

**अस्वीकरण :** यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।